आदिवासी समाज एवं वसावा जाति की संस्कृति

- Nitisha N. Vasava
Department of Hindi
Saurashtra University, Rajkot

पूर्वभूमिका :

दक्षिण गुजरात के आदिवासियों में चौधरी, कुकणा, गामीत जाति की तरह भील की वसावा जनजाति भी मुख्य जाति है। प्रत्येक समाज की अपनी एक अलग संस्कृति होती है। जब हम भारतीय समाज और संस्कृति की और देखते हैं, तो हमे सर्वत्र विविधता और अनेकता के दर्शन होते हैं। भारतीय समाज व्यवस्था की कथित मुख्य धारा अलग–अलग जंगलों, बीहड़वनों, पहाड़ों एवं प्रकृति की अहलादक खुशनुमा प्रकृति की गोद में हजारों वर्षों से मस्तमौला जीवन जीनेवाले आदिवासियों की अपनी अलग ही पहचान और दुनिया है।

भारतीय परंपरा में समाज और संस्कृति को संभाल के सहेजने वाले आदिवासी हैं। किसी भी जनजाति या किसी भी देश या समाज विशेष की संस्कृति से हम उसके उत्कर्ष और अपकर्ष का इतिहास जान सकते हैं। उसमें मानव की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और जीवनसंबंधी सभी पहलुओं का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में वर्णन होता है। "समाज की व्याख्या करते हुए हम कह सकते हैं कि समाज व्यक्तियों का एक समूह जो किसी भू–भाग में निवास करता है।"[1] जिसकी एक अपनी संस्कृति होती है, एकता की भावना होती है तथा खुद का एक अस्तित्व होता है। समाज की परिभाषा की व्याख्या करते हुए मैकाईवर तथा पेज कहते हैं कि "परिभाषा से हमें समाज की विशेषताओं एवं आधारों का पता चलता है। इनके द्वारा ही व्यक्तियों में पाये जाने वाले संबंध एक सुव्यवस्थित सामाजिक संरचना का निर्माण करते हैं। उनके शब्दों में समाज रीतियों, कार्य–प्रणालियां, अधिकार व पारस्परिक सहयोग अनेक समूहों तथा उनके विभागों, मानवव्यवहार पर नियंत्रणों एवं स्वतंत्रताओं की व्यवस्था है। इस सदैव परिवर्तन होनेवाली जटिल व्यवस्था को ही हम समाज कहते हैं।"[2] संस्कृति शब्द को हम इस रूप में समज सकते हैं-" 'संस्कृति' शब्द संस्कृत के 'सम् '(साम्यक /अच्छी तरह) और 'क्रू '(करना या निर्माण करना) से बना है। इसका अर्थ होता है-'परिष्कृत' या 'संस्कारित करना'। दूसरे शब्दों में यह जीवन को शुद्ध, सुंदर और व्यवस्थित बनाने की प्रक्रिया है।"[3]

हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध कवि सुमित्रानंदन पंत संस्कृति की व्याख्या देते हुए कहते हैं कि -"संस्कृति को मैं मानवीय पदार्थ मानता हूँ, जिसमें हमारे जीवन के सूक्ष्म स्थल दोनों धरातलों के सत्यों का समावेश तथा हमारे उर्ध्व चेतनाशिखर का प्रकाश और सामदिक जीवन की मानसिक उपत्यकाओं की छायाएँ गुंफ़ित है। उसके भीतर अध्यात्म, धर्म, नीति से लेकर सामाजिक रूढ़ि, रीति तथा व्यवहारों का सौंदर्य भी एक अंतर–सामजस्य ग्रहण कर लेता है। संस्कृति को हमें अपने हृदय की शिराओं में बहनेवाला मनुष्यत्व का रुधिर कहना चाहिए।"[4]

वसावा जनजाति का समाज एवं संस्कृति :

दक्षिण गुजरात की भील जाति की वसावा उपजाति अपनी संस्कृति की पहचान बनाए रखने में सफल रही है। वसावा जाति के समाज और संस्कृति को निम्नरूप से हम प्रस्तुत करना चाहते हैं-

वसावा समाज के लोग दिन में दो से तीन बार भोजन करते हैं। जिसमें सुबह चाय के साथ रोटी, दोपहर को रोटी, दाल, सब्जी, मांस–मछली पकाई जाती है। विस्तार के अनुरूप भोजन भी अलग–अलग तरह से बनता है। कहीं पर दिन में हलका भोजन लेते हैं, तो कहीं पर शाम को हलका भोजन लेते हैं। उपरांत खेती में दादर, ज्वार, मक्का, बाजरा, गेहूँ तथा दलहन में उड़द, चना, मुंग, मठ, मसूर, मटर, कंदमूल आदि की फसल ज्यादातर रूप में उगाई जाती है। साथ ही मूंगफली की चटनी, खट्टी भाजी ज्यादा मात्रा में उपयोग में लेते हैं। ग्रीष्मऋतु में राब (कांठो-

आटे का निमक डालकर बनाया जानेवाला पेय) पीते हैं, स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद माना जाता है। इसके अलावा वसावा जाति के लोग मांसाहार करने का भी बड़ा शौक रखते हैं, मांसाहार में मुर्गा–मुर्गी, बकरा, केकड़ा, मछलियाँ आदि का उपयोग किया जाता है। धार्मिक त्यौहारों में तथा फसलों को बोते या तो काटते समय भी धार्मिकता के अनुसार माने हुए देवी–देवताओं को मुर्गे की बली देना आदि उनके धार्मिक रिवाजों में होता है। " पुराने जमाने में अतिथि-सत्कार का भाव था, तब चाय या दारू पिलाकर एवं मांस, मछलियाँ खिलाकर किया जाता था, आज यह रिवाज कहीं–कहीं दिखाई देता है। आधुनिक जमाने में शुद्ध शाकाहारी भोजन से ही अतिथि सत्कार किया जाता है। इस प्रकार समय–संजोग के साथ–साथ वसावा समाज में भी बहोत बदलाव आया है।"[5]

सामान्यतः वसावा समाज के लोग गाँव या खेतों में अपना घर बनाकर रहते हैं। जंगल के पास रहने के कारण घर बांधने के लिए लकड़ियों की किल्लत नहीं होती, वसावा समाज के घर गोबर-मिट्टी से बने हुए होते हैं, खास करके घर कुदरती चीज–वस्तुओं में से बनाया जाता है। दीवार, कारावा (क्षुप) की लकड़ियों से या बांस से बनायी जाती है। नीचे का भाग भी गोबर-मिट्टी से लिपा जाता है। आज के आधुनिक युग में वसावा समाज के लोग भी बालू, सीमेंट, ईंट से कोक्रिंट वाला पक्का मकान बनाते हैं।

वसावा समाज के आभूषण और पहनावा शहरवालों से एकदम भिन्न प्रकार के होते हैं। "पुरुषों में धोती, डगली या बुस्कोट (शर्ट), शिर पर रुमाल या धोती की पघडी या तो गांधी टोपी, आधी बाजूवाला खमीस (एक तरह की टी–शर्ट) पहनते हैं। स्त्रीयाँ साड़ी (लुगड़ू, फाला), घाघरा, फ़ुग्गी-वाला (गुब्बारे जैसे फूली) ब्लाउज पहनती है। स्त्रियों के आभूषण हाथ में 'कड़ा' (भोरिया), चांदी-पितल का 'कल्ला' पाँव में, नथ, जड़, चांदी का लोल्यु, एरिंग (एक तरह की बुट्टी (बाली)), हांसडी, वेल्या, वाकल्या, पायल (हाकले) आदि पहनती है।"[6] समय के साथ सोने के आभूषणों का क्रेज रहा है। परिवार व्यवस्था और स्वभाव से इस समाज में कई परिवर्तन आये हैं। जैसेकि " घर में बड़े बुजुर्ग घर का सुकान संभालते थे और उनका आदर भी किया जाता था। परिवार कितना भी बड़ा हो लेकिन एक साथ एक परिवार में एकजुट होकर रहते थे। आज ऐसा नहीं है, आज अधिकतर परिवार विभाजित हो गए है, फिर भी सामाजिक प्रसंगों में संयुक्त कुटुंब की भावना उभरती दिखाई देती है।"[7] स्वभाव से भोलापन, स्वतंत्र और प्रामाणिक होते हैं। अपने समाज के कुल देवताओं तथा देवी–देवताओं पर उनकी अत्यधिक श्रद्धा होती है। आर्थिक स्थिति में उनका एकमात्र आय का जरिया खेती है। मुख्य व्यवसाय खेती और पशुपालन है, अब वर्तमान युगीन परिस्थिति के साथ ज्यादातर परिवारों ने खुद की जमीन और पशुपालन के जरिये आर्थिक परिस्थिति पर काबू पाया है। समय के साथ लोग आगे आये हैं। छोटी-बड़ी नौकरी, प्राइवेट कंपनियों में काम करके अपना जीवनयापन करते हैं।

वसावा आदिवासी समाज प्रकृति के तत्त्वों को देवी-देवता मानते हैं। इसके अलावा स्थानिक देवी-देवता तथा भूत, पिशाच, योनि में भटकते आत्मा आदि में भी श्रद्धा रखते हैं, धार्मिक मान्यताओं के अनुरूप उनकी पूजा आदि भी की जाती है। आदिवासी समाज की कुलदेवी के रूप में देवमोगरा माता को पूजा जाता है। इसके अलावा वसावा समाज के लोग अनेक देवी-देवताओं को मानते हैं। जिसमें- "नांदरवा देव, लीलियारी देव, वाघदेव, गाँव देवता, टोपलिया देव, हिमार्या देव, हातर देवी, उलार्यो–हिवार्यो देव, चोवरियों अमास, पांडरदेवी, ग़माणिया देव, पाटलिया देव आदि की पूजा भी समय=समय पर वे करते हैं।"[8]

सांस्कृतिक परंपराओं के चलते आदिवासी समाज सेकड़ो वर्षों से अपनी कला वैभव को स्वयं की जीवन धड़कन की तरह संभालकर सतत उसमें नाचते-गाते और प्रकृति के साथ तादात्म्य होकर जीती हुई निर्दोष, भोली-भाली प्रजा अपने प्रदेशों में पहाड़ों, गह्वरों और जंगलों के बीच आदिवासी समाज बसा हुआ है। इसमें लोकवाद्य का भी महत्त्व ज्यादा रहा है जैसे -" ढोल, शहनाई वसावा समाज के मनोरंजन का मुख्य वाद्य है। इसके अलावा तूर-थाली, पावी, डोवलु, डफ़णु, टोवली, वाली (देव वाद्य),

मादक, मेराली सीबली, कांगोल आदि ।"[9] लोकगीत, लोकवाद्य, लोकनृत्यों में वसावा आदिवासी समाज की विशिष्टता देखने को मिलती है। वसावा समाज में समूहनृत्य का प्रभाव ज्यादा पाया जाता है।

हमारे देश के सभी त्यौहार भारतीय संस्कृति के प्रतीक है, जिसमें धार्मिक और सामाजिक त्यौहारों का समावेश होता है । दिवाली, अखात्रीज, नागपंचमी, वाघ बारस, दिवासा (अमावस्या का त्यौहार), दशहरा, होली, रक्षाबंधन, नवरात्री, विजयादशमी आदि त्यौहार धूम -धाम से मनाये जाते हैं। वसावा समाज के रीत-रिवाज भी कुछ इस तरह हैं जो -" गर्धाधान से लेकर अंत्येष्टि संस्कार तक लोक-मानस इनका आश्रय लेता है। हिन्दू जनजीवन हेतु धर्मशास्त्रों में षोडश (सोलह) संस्कारों का विधान दिया गया है, इनमें जन्म, विवाह, मृत्यु विषयक संस्कार ही विशेष महत्त्व रखते हैं। "[10] जन्म के समय जब बच्चे का जन्म होता था, तब शराब (दारू) की बुंद से सत्कार करने का रिवाज था, किन्तु अब गुड़ के पानी से किया जाता है। वसावा समाज में बच्चे के जन्म के बाद पांचेरा पूजन (पंचमी का पूजन) या छठ पूजन किया जाता है।[11]

हिन्दू समाज में विवाह प्रथा की शुरुआत कब से हुई होगी यह बताना मुश्किल है, लेकिन एक बात की स्पष्टता होती है कि हमारे पूर्वजों ने विवाह के कार्य को नियंत्रित करके उसको आध्यात्मिक रूप दिया है। वसावा समाज की विवाह व्यवस्था तीन विभागों में विभाजित की जा सकती है। मँगनी, सगाई और विवाह परंपरागत रूप से विवाह में कई विधियाँ की जाती है। जिसमें -" वचेर्या (रिश्ता जोड़नेवाला व्यक्ति) लड़के/लड़की के घर देखने जाना, मँगनी (सगाई), कुमकुम पत्रिका, हल्दी, मंडप मुहूर्त, वर–कन्या को नहलाना, वर–कन्या को मंदिर ले जाना, शांतक करना (ग्रहशांति करना), वरराजा को उतारा देना (दूल्हे को रुकने-तैयार होने के लिए स्थान देना), कन्या को कन्यादान (भेट-बक्षिश) देना, कन्या विदाई, कन्या को लेने जाना आदि।"[12]

जब किसी व्यक्ति की मृत्यु होती है, तबउसे परंपरा के अनुसार विधि-विधान से उसकी क्रियाएँ की जाती है, जिसमें वसावा समाज में मृत्यु के बाद पटाका जलाकर गाँव में मृत्यु की खबर करते हैं और फिर दूसरे गाँव में रहते स्वजनों को कुटुम्ब-कबीले के चार-पाँच व्यक्ति खबर देने जाते हैं। लोगों का मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति को दो बार हल्दी लगाई जाती है। एक बार विवाह के समय और दूसरी बार मृत्यु के प्रसंग पर, मृत व्यक्ति के लिए ननामी (अर्थी) भी तैयार करते हैं, जिसमें चार सूखे नारियेल, फुलहार, एक काली और एक लाल रंग की छोटी मटकी, एक दीया (कुल्ली), अबील-गुलाल, कफ़न (पुरुष के लिए सफ़ेद और स्त्री के लिए लाल) आदि चीजें लाते हैं। छाता ओढ़ाकर राम का नाम लेते-लेते भजन-मंडली से तो कहीं पर तूर-थाली बजाते-बजाते स्मशान में ले जाते हैं। गाँव के लोग अंतिम-संस्कार होने तक चूल्हा नहीं जलाने की प्रथा आदिवासी समाज में है। विसामा देना जिसमें गाँव के चौराहे पर मृतात्मा को पहला विसामा देते हैं, जहाँ पर मृत स्वजन का मुँह देखते हैं और चावल के द्वारा वधामणि करते हैं; बाद में वहाँ से स्मशान के लिए ले जाते है। मृतात्मा को अंतिम भोजन करवाकर फिर उसे अग्नि-संस्कार करते हैं। मृत्यु के पांचवे दिन बेसणा (काण) रखते हैं और उस दिन भी स्वजन घर पर आते हैं और जो व्यवहार करना होता है वो करते हैं। मृत्यु के ठिक बारहवें दिन 'बारवीं' की विधि की जाती है। तेरहवीं के दिन 'तेरवीं' की विधि करते हैं, उसके बाद मृत्यु की संपूर्ण विधि समाप्त होती है।

निष्कर्ष :

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि आदिवासी समाज के अपने रीति-रिवाज तथा अपनी एक अलग समाज की संस्कृति रही है। अपनी संस्कृति और सभ्यता को किस तरह विकसित करके अपना एक अलग अस्तित्व और व्यक्तित्व का दस्तावेज संभाल के रखा हुआ है। जीवन वैविध्यपूर्ण बनाने के लिए त्यौहार और रीति-रिवाज को संभालना जरूरी है। परंपरागत परंपरा को भी संजोना जरूरी है, जिससे लोक-जीवन में विविधता के साथ रसपूर्ण विधियाँ जीवीत रहे । इस प्रकार दक्षिण गुजरात के वसावा समाज की संस्कृति की एक सामान्य झलक और परंपरागत संस्कृति को उभारने का सामान्य प्रयास है। अपने समाज के रीति-

रिवाज और परंपरा को लेकर वसावा समाज गर्व का अनुभव करता है।

➲ संदर्भ संकेत :

1. गढ़वी, डॉ.वी. एस.,गुजरात की आदिवासी संस्कृति, पार्श्व प्रकाशन, अमदाबाद, संस्करण प्रथम, सन् -2000, पृ.10
2. शुक्ल, डॉ.रामशंकर, भाषा शब्दकोश : 'रसाल ', भारतीय विद्या भवन पुस्तकालय, मुंबई, संस्करण प्रथम, सन् 1936, पृ.1522
3. गढ़वी, डॉ.वी. एस.,गुजरात की आदिवासी संस्कृति, पार्श्व प्रकाशन, अमदाबाद, संस्करण प्रथम, सन् -2000, पृ.18
4. डॉ. बाबू गुलाबराय, भारतीय संस्कृति की रूपरेखा, शिवांक प्रकाशन, संस्करण प्रथम, सन् 2024 पृ. 3
5. वसावा, डॉ. रविकुमार आर., वसावा आदिजाति ना लोकगीत साहित्य एक अध्ययन, गूजरात विद्यापीठ, अमदाबाद , पीएच. डी. थीसीस, सन् -2013, पृ. 77
6. जोशी, जयानंद, राजपीपलाना आदिवासी छेलिया, गुजरात साहित्य अकादमी, अमदाबाद, पहला संस्करण सन् –1986, पृ. 15
7. वही, पृ. 17
8. वाघदेव अने देव परंपराओ, गेमजीभाई वसावा, आदिलोक, अमदाबाद , जुलाई/ओगस्ट –2008
9. गुजरातनां लोकनृत्यो, माहिती नियामक, गुजरात राज्य गांधीनगर, सन् 2004, पृ. 36/37
10. वसावा, डॉ. रविकुमार आर., वसावा आदिजातिनां लोकगीत साहित्य एक अध्ययन, गूजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, पीएच. डी. थीसीस, सन् -2013, पृ. 7
11. वही, पृ. 78
12. वही, पृ. 78